षष्ठ अध्याय

गुप्तजी के काव्य में रीति-रिवाज का चित्रण

गुप्तजी के काव्य में रीति-रिवाज़ का चित्रण

साहित्य समाज का दर्पण है। साहित्य में किसी भी देश अथवा युग की संस्कृति का सर्वाधिक प्रामाणिक तथा विश्वसनीय विवरण होता है। उसमें जातीय मनोभाव सुरक्षित रहते हैं जिन्हें संस्कृति का धारक तत्व कह सकते हैं। डा० उमाकान्त के शब्दों में हम कह सकते हैं कि " किसी देश अथवा जाति की रीति-नीति भी संस्कृति का ही अंग है। हमारे यहाँ ऐसा होता है, " ऐसा नहीं आदि वाक्य रीति-नीति को भी संस्कृति का तत्व सिद्ध करते हैं। वास्तव में समाज की स्थापना पर सामूहिक जीवन को सुखी बनाने के लिए कुछ नियमों की निर्धारणा रहती है। (नियम ही कालान्तर में रीतियाँ बन जाया करते हैं) समाज-संघटना भी तो इसी का एक उपाय है। "[1] गुप्तजी को हिन्दू धर्म की सभी उत्कृष्ट रीति-रिवाजों में आस्था है। तीर्थ-व्रत, जप-तप, यज्ञ-याग, पूजा-पाठ वेद आदि सब उनकी सहज श्रद्धा और पूज्य बुद्धि के विषय हैं। इन सबको हिन्दू धर्म की अपनी विशेषताओं के रूप में स्वीकार किया गया।

सभी धार्मिक हिन्दुओं के मन में तीर्थयात्रा करने की अभिलाषा बनी रहती है। " जय भारत " में गुप्तजी ने युधिष्ठिर के मुँह से तीर्थयात्रा और तीर्थस्थानों के महत्व का प्रतिपादन कराया :-

" पूर्वजों के त्याग-तप की स्मृति वहाँ है,
चारणा है, धारणा है, धृति वहाँ है।
नियम-संयम-साधना-क्षमता-क्षमा है,
और अपनी पुण्यभूमि-परिक्रमा है। "[2]

1- डा० उमाकान्त- मैथिलीशरणगुप्त- कवि और भारतीय संस्कृति के आख्याता ; प्रथम सं० , सन् 1958 ई० ; पृष्ठ - 370

2- मैथिलीशरणगुप्त-जयभारत ; तृतीय सं०, २०२७ वि०; पृष्ठ - 169

साकेत में रीति-रिवाज़ो का यथेष्ट वर्णन मिलता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार यह रीति है कि जब कोई अपना प्रियजनकहीं दूर या बाहर जाए तो उसे रोकर विदा नहीं करना चाहिए। इस प्रथा के अनुसार कहा जाता है कि शोक के साथ उसे हीं विदा किया जाता है जिसे फिर कभी अपने यहाँ बुलाना न हो। इसी प्रथा की ओर संकेत करते हुए राम अयोध्यावासियों से कहते हैं :-

" रोकर ही क्या बिदा करोगे सब हमें
आना होगा नहीं यहाँ क्या अब हमें
लौटो तुम सब, यथा समय हम आयेंगे।
भाव तुम्हारे साथ हमारे जायेंगे।
पहुँचाते हैं दूर उसी को शोक में -
जिससे मिलना हो न सके फिर लोक में। "[1]

भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत शुभ अवसरों पर प्राय: मस्तक पर रोली और अक्षत से तिलक लगाने की प्रथा है। " साकेत " में माता कौशल्या मांगलिक कार्य के दिन अर्थात् राम के राज्याभिषेक के अवसर पर मांगलिक उत्सव मनाती हुई पुत्र के मस्तक पर रोली और अक्षत लगाना चाहती हैं। वे सीता से कहती हैं :-

" बहू! तनिक अक्षत रोली,
तिलक लगा दूँ " माँ बोली- [2]

भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत गुरु का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। गुरु हमें ज्ञान का मार्ग बताता है। प्राचीन काल से ही गुरु के समक्ष नतमस्तक होने तथा उनके पैर छूकर श्रद्धा प्रदर्शित करने की प्रथा प्रचलित है। साकेत में हम राम

1- मैथिलीशरणगुप्त - साकेत ; 2025 वि० , पृष्ठ - 128

2- वही, पृष्ठ - 85

को इस प्रथा को पालन करते हुए देखते हैं। सर्वप्रथम नतमस्तक हो कर उन्हें प्रणाम करने के लिए प्रस्तुत राम, गुरु वशिष्ठ को देखते ही करते हैं। तत्पश्चात अपने मस्तक से गुरु के चरणों का स्पर्श करते हैं :-

" मुख्य राजरथ देख समागत सामने,
गुरु को पुनः प्रणाम किया श्रीराम ने।
प्रभु-मस्तक से गये जहाँ गुरु-पद छुये,
चोटी तक वे हृष्टरोम गद्गद हुये। "1

भारतीय संस्कृति में जन्मभूमि को जननी के समान ही महत्व प्रदान किया गया है। जन्मभूमि को स्वर्ग से भी अधिक गौरवमयी बताया गया है। कहा भी है - " जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरियसी " " साकेत " काव्य में राम भी जन्मभूमि के प्रति अत्यन्त प्रेम, श्रद्धा, दृढ़ विश्वास रखते हैं। साकेत की सीमा पर पहुँचकर राम के हृदय में जन्मभूमि के प्रति प्रेमावेग उमड़ आया। राम रथ से उतरकर सधैर्य उसे प्रणाम करते हैं :-

" जन्मभूमि ले प्रणति और प्रस्थान दे ;
हमको गौरव गर्व तथा निज मान दे।
तेरे कीर्ति स्तम्भ, सौध मन्दिर यथा-
रहे हमारे शीर्ष समुन्नत सर्वथा।।
x x x
शुचि रुचि शिल्पादर्श शरद घन पुंज तू,
कलाकलित, अति ललित कल्पना-कुंज तू। "2

भारतीय संस्कृति के अनुसार तीर्थस्थानों का अत्यधिक महत्व है। यह तीर्थ स्थान कई दृष्टियों से लाभप्रद हैं। यह तीर्थ,लोगों में धार्मिकता एवं पवित्रता

1- मैथिलीशरणगुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 124
2- वही, पृष्ठ - 133-135

की भावना भरते हैं। इनके द्वारा मानसिक क्लेशों का निवारण होता है। भारत के हिमालय, विन्ध्य, चित्रकूट, पर्वत, गंगा, यमुना आदि नदियाँ, मानसरोवर इन सबका केवल भौतिक महत्त्व ही नहीं है,यह सभी प्रेरक उपादान के रूप में भी कार्य करती हैं। भारतीय संस्कृति ने इन सबको धार्मिक रंग में रंग दिया है। प्राय उपर्युक्त सभी स्थानों पर तीर्थ स्थान है। गंगा नदी के विषय में यह विश्वास प्रचलित है कि यह भौतिक संतापों को दूर करती है। सीता मार्ग में गंगानदी को देखकर हर्ष विभोर हो उठती हैं एवं गंगाजी की प्रार्थना करती हुई कहती है :-

" जय गंगे, आनन्द तरंगे, कलरवे,
अमल, अंचले, पुण्यजले, दिवसम्भवे।
सरस रहे यह भरत-भूमि तुमसे सदा,
हम सबकी तुम एक चलाचल सम्पदा। "1

संस्कारों के अतिरिक्त गुप्त जी ने अपने काव्यों में सती, स्वयंवर अभिषेक उपवास आदि प्रथाओं पर भी संकेत किया है। पति की मृत्यु के बाद भारतीय नारी का सर्वस्व नष्ट हो जाता है। " साकेत " काव्य में राजा दशरथ की मृत्यु के उपरान्त कौशल्या इसी भाव को अभिव्यक्त करती है :-

" हाय भगवन क्यों हमारा नाम?
अब हमें इस लोक से क्या काम?
भूमि पर हम आज केवल भार,
क्यों सहे संसार हाहाकार। "2

भारतीय संस्कृति में पति को ही पत्नी की गति माना गया है। पति ही पत्नी के जीवन का सर्वस्व माना जाता है। अतः पति की मृत्यु के पश्चात्

---

1 - मैथिलीशरणगुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 145

2- वही, पृष्ठ - 210

उसे वैधव्य जीवन यापन करना पड़ता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार विधवा स्त्री को भोग से दूर रहकर पति के स्मरण में जीवन व्यतीत करने को श्रेय माना गया है। मध्ययुग में सती प्रथा का प्रचलन था किन्तु आधुनिक मनीषियों ने इस प्रथा को रोक दिया। सती प्रथा को रोकने में राजाराममोहन रायका नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। कुछ मनीषियों ने विधवाओं के पुनर्विवाह की ओर संकेत किया। गुप्तजी भारतीय संस्कृति के मानने वाले कवि हैं अतः उन्होंने इन रीतियों का चित्रण अपने काव्य में किया है। राजादशरथ के निधन पर कौशल्या का धन लुट गया उन्हें अपना जीवन निस्सार सा लगने लगा। अतः उन्होंने पति-देह के साथ सती हो जाना श्रेय समझा, किन्तु गुरु वशिष्ठने इस कार्य को अविचार पूर्ण कहा :-

" दैवियों ऐसा नहीं वैधव्य
भाव भव में कौन वैसा भव्य?
धन्य वह अनुराग निर्मल-राग,
और शुचिता का अपूर्व सुहाग।
अग्निमय है अब तुम्हारा नाम,
दग्ध हो जिसमें स्वयं सब काम।
सहमरण के धर्म से भी ज्येष्ठ;
आयुभर स्वामि स्मरण है श्रेष्ठ। "।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि आधुनिक दृष्टि के अनुसार सती-प्रथा का विरोध करता है तथा स्वामीके स्मरण में जीवन व्यतीत करने तथा तप, एवं संयम करने को सहमरण की अपेक्षा श्रेय बताता है।

भारतीय समाज में अनेक संस्कार प्रचलित हैं। यहाँ विवाह, गर्भाधान, पुंसवन, सीमान्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूड़ाकरण, उपनयन,

---

1- मैथिलीशरणगुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; 210

समापवर्त्तन आदि बहुत से संस्कार किए जाते हैं। साकेत में कई स्थानों पर इन संस्कारों का, विशेष रूप से विवाह एवं मरण का उल्लेख मिलता है। उर्मिला विवाह का आदर्श बताती है :-

" कर-पीड़न प्रेम-त्याग था
वह स्वीकार कहूँ कि त्याग था
नर का अमरत्व-तत्व था
वह नारी-कुल का महत्व था। "1

भारतीय संस्कृति में संस्कारों का महत्व पूर्णस्थान है। पहले सोलह संस्कार, प्रचलित थे। अब मुख्य रूप से जन्मसंस्कार, विवाह संस्कार एवं अन्त्येष्टि संस्कार शेष रह गए हैं। यह भारत में सर्वत्र प्रचलित हैं। गुप्त जी ने साकेत में अन्त्येष्टि संस्कार का चित्र बड़े ही भव्यता के साथ अंकित किया है। राजा दशरथ के अन्त्येष्टि संस्कार के लिए सारी सेना सजायी जाती है, चारों ओर दुन्दुभी बजाई जाती है, परिवार के समस्त प्राणी, पौरजन सम्मिलित होते है, सूत-मागध - बन्दी जन विजय के गीत गाते हैं, लोग वस्त्र, धन एवं रत्न लुटाते हैं इस प्रकार बड़ी धूमधाम से अन्त्येष्टि संस्कार सम्पन्न होता है :-

" आज नरपति का महासंस्कार,
उमड़ने दो लोक-पारावार।
है महायात्रा यही, इस हेतु,
फहरने दो आज सौ-सौ केतु।
सुकृतियों के जन्म में भव-मुक्ति
और उनकी मृत्यु में शुभ मुक्ति
अश्व-गज रथ हों सुसज्जितसर्व
आज है सुर-धाम यात्रा पर्व। "2

1- मैथिलीशरणगुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 380
2- वही, पृष्ठ - 213

भारत में पिता की मृत्यु पर पुत्र द्वारा श्रद्धांजलि देने की परम्परा है। साकेत वासियों के चित्रकूट पहुँचने पर राम को पिता की मृत्यु का समाचार प्राप्त होता है, अतः :-

" बोले गुरु से प्रभु साश्रु वदन श्रद्धांजलि
दे सकता हूँ क्या उन्हें अभी श्रद्धांजलि?
पितृ देव गये हैं हाय! तृषित ही सुरपुरा! "1

जंगल में राम के पास पुष्प, पत्र, फल के अतिरिक्त कुछ न था। अतः उन्होंने कहा कि देव पूजा न देखकर मेरी भक्ति को ही देखेंगे :-

"भगवन उस जन में भक्ति-भाव अविकल है,
पर अर्पणार्थ बस पत्र-पुष्प-फल-जल है। "2

भारतीय संस्कृति में अन्त्येष्टि क्रिया के पश्चात् एक निश्चित अवधि में श्राद्ध कार्य सम्पन्न किया जाता है श्राद्ध आदि कार्य में श्रद्धा को बहुत अधिक महत्त्व दिया गया है।

गुरु वशिष्ठ की सांत्वनावाणी को सुनकर रामचन्द्र जी ने कहा देवतुल्य पिता पूजा की सामग्री पर ध्यान न देकर हृदय की भक्ति-भाव ही देखेंगे। अत्यंत कृपावान होने से वे थोड़ी को भी बहुत समझेंगे :-

" पूजा न देखकर देव भक्ति देखेंगे,
थोड़े को भी वे सदय बहुत लेखेंगे। "3

माता कैकेयी भी राम से बोली कि सच्चा श्राद्ध तो हृदय के श्रद्धाभाव द्वारा होताहै, व्यर्थ के आडम्बर द्वारा नहीं :-

---

1- मैथिलीशरणगुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 242

2- वही, पृष्ठ - 243

3- वही, पृष्ठ - 243

" है श्रद्धा पर ही श्राद्ध न आडम्बर पर "।

भक्ति-भाव से परिपूर्ण हृदय लिए रामचन्द्र जी ने मुनियों के बीच बैठकर अपने हाथों से सामग्री एकत्रित कर श्राद्ध का कार्य विधिपूर्वक संपन्न किया :-

" प्रभु ने मुनियों के मध्य श्राद्ध-विधि साधी
ज्यों दण्ड चुकावे आप अवश अपराधी। "2

भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत पत्नी पति का नाम नहीं लेती। वह उसके लिए जाने अनजाने में कोई अपशब्द मुखसे निकालना बुरा समझती है। साकेत में वियोगिनी उर्मिला भूल से लक्ष्मण को वन से लौटा हुआ जानकर कुछ भला बुरा कह बैठती है एवं उसके मुँह से एक शब्द निकल जाता है, जो लक्ष्मण का धौतक है। इसलिए कार्यों के लिए उर्मिला अत्यन्त पश्चाताप करती है। उसका पश्चाताप भारतीय नारी के सांस्कृतिक प्रभाव का सूचक है। उर्मिला अपने कार्य का पश्चाताप इसप्रकार करती है :-

" अधम उर्मिले, हाय निर्दया।
पतित नाथ हैं, तू सदाशया?
नियम पालती एक मात्र तू,
सब अपात्र हैं, और पात्र तू?
मुँह दिखायेगी, क्या उन्हें अरी,
मर संशया, क्यों न तू मरी। "3

1- मैथिलीशरणगुप्त - साकेत ; 2025 वि0 ; पृष्ठ - 243

2- वही, पृष्ठ - 245

3- वही, पृष्ठ - 336

भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत बहुदेववाद प्रचलित है यहाँ विभिन्न देवी देवताओं का अर्चन अत्यन्त विनय के साथ किया जाता है। " यह विभिन्न देवी देवताओं का गुणगान इस बात का द्योतक है कि यहाँ पर उस एक शक्ति को विभिन्न रूपों में देखने के विचार वैदिक काल के आधार पर चले आ रहे हैं, क्योंकि "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति " के आधार पर उस एक शक्ति को ही क-हीं शिव, कहीं पार्वती और कहीं गंगा आदि रूपों में देखा सुना है। "1 इसी धारणा में विश्वास होने के कारण गुप्तजी ने अपने काव्य में अनेक देवी देवताओं की स्तुति की है। साकेत के प्रारम्भ में ही उन्होंने गणेश-वन्दना करते हुए लिखा है :-

" जयति कुमार-अभियोग-गिरा गौरी-प्रति,
स-गण गिरीश जिसे सुन मुसकाते हैं -
देखो अम्ब, ये हेरम्ब मानस के तीर पर
सुन्दिल शरीर एक उधम मचाते हैं। "2

x x x

सरस्वती जी की वन्दना करते हुए उन्होंने लिखा है :-

" अयि दयामयि देवी, सुखदे; सारदे,
इधर भी निज वरद पाणि पसारदे।
दास की यह देह-तन्त्री सार दे,
रोम-तारों में नई झंकार दे। "3

1- द्वारिका प्रसाद सक्सेना - साकेत में काव्य, संस्कृति और दर्शन ; प्रथम संस्करण , 1961 ; पृष्ठ - 304

2- मैथिलीशरणगुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 16

3- वही, पृष्ठ - 17

इसी प्रकार युद्ध की देवी चण्डी तथा युद्ध के देवता रुद्रकाली की कल्पना की है:-

"कुल देवता ने सभी कुशल वीरों की मानी,
ताली देकर नाच रहे थे रुद्रकाली ।
कुल-माता भी बनी जया कुलों की काली,
रण-चण्डी पर चढ़ी, चढ़ी काली कमलवाली।" 1

भारतीय संस्कृति में यह विश्वास प्रचलित है कि संसार में सब कुछ वही शक्ति करती है एवं वही एकमात्र नियन्ता है । उस एक मात्र शक्ति को कोई राम, कोई कृष्ण, कोई महादेव के नाम से पुकारता है । वे यह विश्वास करते हैं कि भगवान राम अपनी माया को स्वयं ही जान सकते हैं, वे किस समय क्या करना चाहते हैं । उनके इस अलौकिक रहस्य को अन्य कोई नहीं जान सकता । इसीलिए कवि कहता है :-

"करें कब क्या, इसे बस राम जानें
वही अपने अलौकिक काम जानें ।" 2

भारतीय संस्कृति में मानसिक संताप के निवारण के लिए भी जप-तप, समाधि आदि का विधान है, क्योंकि मन को एकाग्र करके जब उसे संसार के माया, मोह से हटा लिया जाता है, तब कुछ क्षणों के लिए उसे शांति मिलती है। इसी के लिए यहाँ संध्या-वंदन आत्मचिंतन, समाधि आदि का विशेष विधान किया गया है ।" 3 मानसिक संताप आदि का निवारण आत्मचिंतन अथवा समाधि द्वारा बताते हुए कवि ने लिखा है :-

"आ बैठे हैं मेटने को आधि,
आत्मचिन्तन-रत अचल स-समाधि ।" 4

1- मैथिली शरण गुप्त- साकेत, 2025 वि०, पृष्ठ - 487

2- वही- पृष्ठ - 69

3- द्वारिका प्रसाद सक्सेना- "साकेत में काव्य, संस्कृति और दर्शन, द्वि सं, 1973
पृष्ठ - 270

4- मैथिली शरण गुप्त- साकेत, 2025 वि०, पृष्ठ - 191

यहाँ लोगों का विश्वास है कि ईश्वर ही समस्त संताप तथा अनिष्ट में रक्षा करने वाला है। वही एक मात्र सहारा है। घर हो या वन सर्वत्र ईश्वर ही रक्षक है। "साकेत" काव्य में वन जाते समय सीता उर्मिला को सांत्वना देती हुई यही बात समझा रही है :-

" बहन धैर्य का अवसर है", वह बोली "अब ईश्वर है।"
सीता बोली कि "हाँ बहिन, सभी कहीं, गृह हो कि
गहने।"1

उस ईश्वर में विनाशकारी शत्रु से अधिक बल है। मेघनाद के साथ युद्ध करते हुए लक्ष्मण के आहत होने का समाचार जान भरत, शत्रुघ्न और माण्डवी व्याकुल हो उठे। उनको इस प्रकार चिन्ताग्रस्त देखकर हनुमान ने सांत्वना देते हुए कहा- मारने वाले से रक्षा करने वाला अधिक बलवान होता है:-

" धैर्य न छोड़ें आप, शान्त हों,
भक्षक से रक्षक बलवान।"2

ईश्वर में विश्वास होने के कारण लोग उनकी पूजा करते हैं, उनके प्रति श्रद्धा अर्पित करने के लिए जप, अर्चना आदि भी करते हैं। "साकेत" में पूजा, अर्चन की ओर कवि ने कई बार संकेत किया है।

भारतीय संस्कृति के अनुसार सती तथा परनारी को मातृवत पूज्य माना गया है। उनको कुदृष्टि से देखना अवांछनीय एवं गर्हित कर्म माना जाता है। साकेत में कवि ने इस रीति की ओर संकेत किया है। विभीषण रावण से

1- मैथिलीशरण गुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 107
2- वही, पृष्ठ - 442

समझाते हुए कहते हैं :-

" परनारी, फिर सती और वह
त्याग-मूर्ति सीता-सी सृष्टि,
जिसे मानता हूँ मैं माता,
आप उसी पर करें कुदृष्टि।"1

भारत का अतीत काल निष्कलुष है अत: उसकी गौरव-परम्पराएँ अपूर्व एवं अमूल्य हैं। भारतीय अपने अतीत काल से प्रेरणा ग्रहण करते हैं। कवि के साकेत में रघुकुल की गरिमा का गान किया है तथा उससे प्रेरणा लेने की ओर संकेत किया है--

" किसने रात यज्ञ हैं किए,
पदवी वासव की बिना लिए?
सुन, हैं कहते कृती कवि--
मिलती सागर को न जान्हवी,
एक-भगीरथ यत्न जो कहीं
करते वे सरयू सखा नहीं।
x x x
जिसका गत यों महान है।"2

भारत में स्थान-स्थान पर तीर्थभूमि दिखाई पड़ते हैं। वेद यहाँ की आस्था एवं विश्वास के ही प्रतीक हैं। यहाँ के लोग यहाँ के वन, पर्वत, नद, नदी, सिंधु आदि सभी से प्रेरणा ग्रहण करते हैं। वे इनको पूज्य मानकर इनके

1- मैथिलीशरण गुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 437
2- वही, पृष्ठ - 348

प्रति श्रद्धा प्रकट करते हैं। कवि ने साकेत में यत्र-तत्र तीर्थ स्थानों की प्रशंसा की है। प्रभु के अवतार रूप ग्रहण करने वाली भूमि अयोध्या को वे इन्द्रपुरी बताते हैं। उनका कहना है कि अयोध्या के विशालभवन इन्द्रपुरी के भवनों के समान हैं। अयोध्या के उपवन इन्द्रपुरी के नन्दन बन हैं—

" है अयोध्या अवनि की अमरावती।
इन्द्र हैं दशरथ विदित वीर व्रती,
वैजयन्त विशाल उनके धाम हैं,
और नन्दन वन बने आराम हैं।"[1]

इतना ही नहीं कवि ने अयोध्यापुरी की सरयू नदी को स्वर्ग गंगा से भी अधिक महान् एवं गरिमामयी बताया है:-

" स्वर्ग की तुलना उचित ही है यहाँ
किन्तु सुर सरिता कहाँ, सरयू कहाँ?
सामरों को मात्र पार उतारती,
यह यहीं से जीवितों को तारती।"[2]

कवि ने जहाँ एक ओर अयोध्या की पावनता का वर्णन किया है वहीं चित्रकूट की भी गरिमा एवं महानता का वर्णन किया है तथा उसके प्रति भी अपनी धार्मिक आस्था को प्रकट किया है। इन सभी तीर्थस्थानों का वर्णन कर कवि ने इस ओर संकेत किया है कि भारत के लोग अपनी तीर्थभूमि को अत्यन्त श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं। उनके मनमें अपनी इस भूमि के प्रति अटूट प्रेम झलक है। चित्रकूट पर अपनी श्रद्धा व्यक्त करता हुआ कवि कहता है कि

1- मैथिलीशरण गुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 22
2- वही, पृष्ठ - 21

हे सिद्ध शिलाओं के आधार, हे उच्च उदार और पर्वतों के गौरव, तुझ पर अनेक ऊँचे-ऊँचे झाड़ हैं और छत्र की भाँति पत्तों युक्त पेड़ पौधे खड़े हैं। तेरी छाया भी कितनी अपूर्व है। हे उच्च उदार पर्वतों के गौरव चित्रकूट अनेक प्राणी तुझ पर विहार करते हैं---

" सिद्ध शिलाओं के आधार, और गौरव-गिरि, उच्च उदार।
तुझपर ऊँचे-ऊँचे झाड़, तने पत्रमय छत्र पहाड़।
क्या अपूर्व है तेरी आड़, करते हैं बहु जीव विहार।"1

कवि भारतभूमि के चरणों में लहराते हुए सागर का वर्णन करता है एवं उसको करुणा का आगार बताता है--

" लहराता भरपूर सामने करुणालय है,
युग-युग का अनुभूतशिव का करुणालय है।"2

इस प्रकार भारतीय अपनी तीर्थभूमि के प्रति अगाध श्रद्धा रखते हैं। पूजा पाठ करना, दीप रखना आदि मांगलिक कार्य तत्कालीन समाज में होते थे। गुप्तजी के काव्य "वक-संहार" में हमें इसके भी दर्शन होते हैं। ब्राह्मण परिवार की कन्या तुलसी-तले दीप रखती है--

" था पास ही तुलसी-धरा,
जो वायु-शोधक था हरा,
सुमुखी सुता थीं दीप उस पर धर रही।"3

1- मैथिलीशरण गुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 274

2- वही, पृष्ठ - 477

3- मैथिलीशरण गुप्त - वकसंहार ; 2021 वि० ; पृष्ठ - 7

भाग्य एवं नियति पर विश्वास करने के ही कारण आपत्ति आने पर लोग प्रायः अपने भाग्य को ही कोसते हैं। कहाँ तो रामचन्द्रजी का अभिषेक होने जा रहा था और कहाँ बनवास मिला। निकट भविष्य भी अदृश्य बना रहता है। उर्मिला अपने दुर्भाग्य को कोसती हुई कहती है कि दूसरों का अनिष्ट करना ही तुझे क्यों इष्ट है? तू सदैव बने हुए कार्यको बिगाड़ता है, दूसरों को रक्षा करने का अवसर दिए बिना ही तू छिपकर बिना आगा-पीछा किए प्रहार करता है:-

" दुरदृष्ट, बतादे स्पष्ट मुझे -
क्यों है अनिष्ट ही इष्ट तुझे- ?
तू है बिगाड़ता काम बना,
रहता है बहुधा वाम बना।"[1]

भारतीयों का विश्वास है कि भिन्न-भिन्न मनुष्यों के भाग्य उसके कर्म के अनुसार ही होते हैं। पूर्वजन्म में मनुष्य जैसे कार्य करता है उसी के अनुसार उसके भाग्य का निर्माण होता है। "साकेत" में लक्ष्मण सीता से कहते हैं भाग्य भी तो पहले किए गए कर्मों का परिणाम है:-

" माना आर्ये, सभी भाग्यों का भोग है,
किन्तु भाग्य भी पूर्वकर्मों का योग है।"[2]

अतिथि-सत्कार करना भारतीयों की अनेक रीतियों में से एक है। अतिथि को वे देवता समान मानते हैं। "वकसंहार" नामक लघु खण्डकाव्य में गुप्तजी द्वारा प्रस्तुत अतिथि-सत्कार की झाँकी द्रष्टव्य है--

" आतिथ्य और अतिथि-कथा,
तेरी पुरानी वह प्रथा,

1- मैथिलीशरण गुप्त - साकेत ; 2025 वि० ; पृष्ठ - 165
2- वही, पृष्ठ - 153

प्राचीन भारत, आज भी सुनवीन है।
अब अतिथि भिक्षुक मात्र है,
अधिकांश अन्न अपात्र है ;
भिक्षा बना व्यवसाय, तू भी दीन है।"[1]

अतिथि के आने पर गृह स्वामिनी प्रसन्न वदना, मधुर वचनों से उसका स्वागत करती है:-

" थी शान्ति पूरे तौर से,
ध्वनि सुन पड़ी तब पौर से,--
" गृह नाथ हैं? मैं अतिथि हूँ, सुत साथ है।
झट ब्राह्मणी चौंकी, चली,
कहकर मधुर वचनावली
" आओ अहा! हम सब विशेष सनाथ हैं।"[2]

शुभ अवसरोंपर मनोकामना की पूर्ति के लिए हिन्दू लोग दीपदान करते हैं। "यशोधरा" नामक काव्य में यशोधरा-दीप-दान कर नदी का पूजन करती है:-

" तुझे नदीश मान दे,
नदी, प्रदीप दान ले।"[3]

स्त्रियाँ विभिन्न अवसरों पर पारम्परिक व्रतों का पालन करती हैं। गुप्तजी ने अपनी माता को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके विविध व्रतों का

1- मैथिलीशरण गुप्त - वकसंहार ; 2021 वि० ; पृष्ठ - 6
2- वही, पृष्ठ - 8
3- मैथिलीशरण गुप्त - यशोधरा ; 2007 वि० ; पृष्ठ - 115

उल्लेख किया है :-

" भूले तेरे व्रत विविध अब भी याद प्रसाद।"[1]

देव-देवी पूजन के अवसर पर बलि प्रदान की प्रथा चली आ रही है, पर गुप्तजी इसका विरोध करते हैं। वे बलिदान का अर्थ जीव-हत्या नहीं मानते हैं, बल्कि स्वार्थों के त्याग को ही बलिदान मानते हैं:-

" क्षुद्र मेष अथवा वे छाग, सिद्ध नहीं कर सकते याग।
करो, करो कुछ आत्म-त्याग, जिस पर है माँ का अनुराग।"[2]

नारी को पतिव्रता होना चाहिए। शूर्पणखा के तर्क देने पर कि क्या एक पुरुष की दो नारियाँ नहीं हो सकती? लक्ष्मण ने इसका विरोध किया और कहा कि नारियाँ भी दो पति रख सकती हैं, किन्तु सर्वप्रथम उन्हें अपने आचार का ध्यान रखना चाहिए:-

" मेरे मत में एक और है
शास्त्रों की विधियाँ सारी,
अपना अन्तःकरण आप है,
आचारों का सुविचारी।"[3]

महाकवि मैथिलीशरणजी परम्परा के पुजारी हैं। ये रूढ़ियों का और कुप्रथाओं का तो डटकर विरोध करते हैं किन्तु कुल और देश की रीतियों के समर्थन को धर्म का अंग मानते हैं। अतएव रीति-रिवाजों के वर्णन में इन्होंने काव्य के भरपूर उपयोग का प्रयास किया इतना ही नहीं उन्होंने इन वस्तुओं को रसात्मक धरातल पर प्रतिष्ठित करने में प्रशंसनीय सफलता प्राप्त की ।

1- मैथिलीशरणगुप्त - प्रदक्षिणा ; प्रथमावृत्ति ; पृष्ठ - 3
2- मैथिलीशरणगुप्त - हिन्दू ; तृतीय संस्करण ; पृष्ठ - 142
3- मैथिलीशरणगुप्त - पंचवटी ; तिरसठवाँ संस्करण ; 2028 वि० ; पृ-32